ShodhVarta
An International Peer-Reviewed Journal
www.shodhvarta.in
Vol 02 Issue 03

संपादकीय

इस अंक के आवरण पृष्ठ पर जो चित्र आप देख रहे हैं वह है मधुबनी कला। आज, मधुबनी कला का नाम किसी भी पहचान की मोहताज नहीं है। बड़े पेंटिंग हाउस और फोटो गैलरी में जब भी जाते हैं, हमें वहां मधुबनी कला के कुछ अद्वितीय चित्र देखने को अवश्य मिलते हैं। बिहार के मिथिला क्षेत्र में इस कला की शैली की उत्पत्ति हुई है, इसलिए इसे मिथिला चित्रों (कला) के रूप में भी जाना जाता है। मधुबनी कला ने अपने अद्भुत विविधता, जीवंत रंगों और रूपकीय अभिव्यक्ति के लिए प्रशंसा प्राप्त की है। इस प्राचीन कला के अंतर्गत, प्राकृतिक तत्वों, पक्षियों, पौराणिक कथाओं और लोक नृत्यों को प्रमुखता से दिखाया जाता है। यहां प्रयुक्त रंगों की संवेदनशीलता और जीवंतता से इसकी खासियत बढ़ती है।

जितवारपुर गांव का महत्व मधुबनी कला के विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह गांव इस कला की जीवांत परंपरा का घर है और इसने इसकी महत्वाकांक्षी पहचान बनाई है। स्थानीय लोगों के लिए यह कला एक जीवनशैली का हिस्सा है और इसके माध्यम से सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास को प्रोत्साहित किया जाता है। सरकारी और गैर-सरकारी संगठनों के सहयोग से, इस कला को संरक्षित रखने के साथ ही गरीबी के खिलाफ लड़ाई में भी लोगों को सशक्त करने का प्रयास किया जा रहा है। मधुबनी कला न केवल एक रंगीन और सुंदर कला है, बल्कि यह एक सामाजिक आंदोलन का भी हिस्सा है, जो गरीबी को उन्नति की ओर ले जाने के लिए अपना योगदान दे रहा है।

मधुबनी कला का इतिहास श्री राम काल से बताया जाता है। इस शानदार चित्रकला का जन्म मिथिला के राजा जनक के समय महिला कलाकारों द्वारा हुआ था, जब उन्होंने अपनी बेटी सीता के विवाह के दौरान इन कलाओं को अपने घरों की सजावट के लिए बनवाया था। पहले इस कला का उपयोग समाज के उच्च वर्ग लोग ही करते थे, लेकिन समय के साथ ये सीमाएं दूर हो गईं और आजकल मिथिलांचल के कई गांवों में इस कला का प्रचलन है। खासकर महिलाएं इस कला में अधिक रुचि दिखाती हैं, लेकिन आजकल पुरुष भी इस कला में शामिल हो गए हैं।

मधुबनी कला दो तरह की होती है, एक है भित्ती चित्र और दूसरी है अल्पना। चित्रों में देवी-देवताओं के साथ प्राकृतिक दृश्यों जैसे पेड़-पौधे, सूर्य-चंद्रमा आदि को शामिल किया जाता है। और सबसे खास बात, इन चित्रों को बनाने में प्राकृतिक रंगों का ही इस्तेमाल किया जाता है। जैसे हल्दी, केले के पत्ते, लाल रंग के लिए पीपल के पेड़ की छाल आदि। यहां तक कि रंगों के लिए दूध तक का प्रयोग किया जाता है। चित्रकारी के लिए बांस की पतली नोकदार कलम और माचिस की तीली का उपयोग किया जाता है। रंगों को स्थायी बनाने के लिए बबूल की गोंद का उपयोग किया जाता है।

मधुबनी कला 1950 तक एक लोक कला के रूप में जानी जाती थी। हालांकि, इसे शायद ग्लोबल पहचान नहीं मिलती अगर एक ब्रिटिश ऑफिसर ने इस कला के प्रति अपना रुझान नहीं दिखाया होता। 1934 में मिथिलांचल में एक भूकंप हुआ, जिससे काफी नुकसान हुआ। इस त्रासदी को देखने के लिए ऑफिसर विलियम आर्चर यहां पहुंचे। आर्चर ने इसानों के दीवारों पर बनी पेंटिंग्स देखीं, जो उन्हें नई और अद्वितीय लगीं। उन्होंने इन पेंटिंग्स की तस्वीरें खींच ली, जो मधुबनी कला की सबसे पुरानी जानी जाती हैं। 1949 में, आर्चर ने अपने आर्टिकल 'मार्ग' में इसके बारे में लिखा और मधुबनी कला को मीरो और पिकासो जैसे मॉडर्न कलाकारों की पेंटिंग्स के समकक्ष माना। इससे ही इस पेंटिंग को ग्लोबल पहचान मिली।

मधुबनी कला विभिन्न शैली में बनाई जाती है, जैसे भरनी, कचनी, तांत्रिक, गोदना और कोहबर। पहले तीन स्टाइल, यानी भरनी, कचनी और तांत्रिक, मधुबनी के ब्राह्मण और कायस्थ महिलाओं द्वारा आरंभ किए गए थे। 1960 में दुसाध समुदाय की महिलाएं नए और अनोखे तरीके से इन पेंटिंग्स को बनाने की शुरुआत की, जिसमें राजा सह्लेश की प्रेरणा दिखाई देती है। लेकिन समय के साथ, यह पेंटिंग और इसके नए कलाकार ग्लोबल हो चुके हैं और इसमें कई आधुनिक शैली उभर कर सामने आए हैं। मधुबनी कला संस्कृति को आमतौर पर महिलाएं ही अपने हाथों से उत्पन्न करती हैं। इस पेंटिंग को बनाने वाली एक ही गांव की तीन महिलाओं, सीता देवी, जगदंबा देवी, महासुंदरी देवी और बउवा देवी को पद्म पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है।

संपादक